आर्थिक विकास के अवरोधक तत्व का बैतूल जिले पर प्रभाव और भूमिका

नाम– केषवनंद साहू

महाविधालय – पंडित जवाहारलाल नेहरू महाविधालय आमला

विभाग – इतिहास

शोध सार

किसी देश का आर्थिक विकास उसकी भौतिक पूँजी एवं मानवीय पूँजी पर निर्भर करता हैं। आर्थिक विकास की दृष्टि से भौतिक पूँजी की अपेक्षा मानवीय पूँजी अधिक महत्वपूर्ण होती है क्योंकि मानवीय साधनों की कुशलता एवं दक्षता पर ही आर्थिक विकास का ढाँचा टिका होता है। आर्थिक पिछड़ापन दूर करने और प्रगति, क्षमता एंव प्रोत्साहन उत्पन्न करने के लिए यह आवयक है कि लोगों के ज्ञान व कुशलता में वृद्धि की जाए वास्तव में मानव साधन के गुण में सुधार किए बिना अल्पविकसित देश में प्रगति सम्भव नही । प्रत्येक देश के आर्थिक विकास की पृष्ठभूमि में कुछ ऐसे तत्व विद्यमान होते हैं जिन पर उस देश का आर्थिक विकास निर्भर करता है। आमतौर से इन तत्वों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जाता है–(अ) प्रधान चालक तत्व एवं अनुपूरक तत्व (ब) आर्थिक एवं गैर आर्थिक तत्व। प्रधान चालक अथवा प्राथमिक तत्व वे तत्व होते हैं जो उस देश के आर्थिक विकास के कार्य को प्रारम्भ करते हैं। विकास की नींव वास्तव में इन्हीं तत्वों पर रखी जाती है। प्रधान चालक तत्वों के माध्यम से जब विकास की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है तो कुछ अन्य तत्व इनको तीव्रता प्रदान करते हैं। वास्तव में इन्हें ही अनुपूरक अथवा गौण अथवा सहायक तत्व कहा जाता है। इस प्रकार प्राथमिक तत्व विकास की आधारशिला हैं जबकि अनुपूरक तत्व आर्थिक विकास को गति प्रदान करते हैं और इसे बनाये रखने में सहायक सिद्ध होते हैं। प्रधान चालक तत्वों में प्राकृतिक साधन मानवीय साधन कौशल निर्माण तथा सामाजिक, सांस्कृतिक व संस्थागत तत्वों को सम्मिलित किया जाता है। इसके विपरीत अनुपूरक तत्वों में जनसंख्या वृद्धि प्राविधिक विकास की दर, और पूंजी निर्माण की दर मुख्य हैं। प्रधान चालक और अनुपूरक तत्वों के सापेक्षिक महत्व, वर्गीकरण व स्वरूपों के सम्बन्ध में अर्थशास्त्रियों में काफी मतभेद पाया जाता है। कुछ लोग प्रधान चालक तत्वों को महत्व प्रदान करते हैं। तो कुछ लोग सहायक तत्वों को।

कुंजी शब्द . मानव पूँजी, आर्थिक विकास, मानव संसाधन, कुशलता, विकासशील देश।

1.प्रस्तावना

विकास शब्द का प्रयोग बहुत व्यापक अर्थ में लिया जाता है। विकास शब्द परिवर्तन की उस गति को दर्शाता है जिसके अन्तर्गत एक अवस्था दूसरी अवस्था का स्थान लेती हुई आगे बढ़ती जाती है। विकास एक मूल्यपूरक अवधारणा है। हर परिवर्तन से विकास नहीं होता। जब परिवर्तन एक निश्चित लक्ष्य की ओर नियोजित ढंग से होता है, तब वह 'विकास' कहलाता है।

विकास एक बहुआयामी अवधारणा है जिसमें कृषि, व्यापार, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा इत्यादि सम्मिलित है। इसी के साथ कमजोर वर्गों, महिलाओं, बीमारों, बुजुर्गो, बच्चों, बेरोजगारों तथा अल्पसंख्याकों के कल्याण को रखा जाता है। इस प्रकार विकास का विज्ञान काफी फैला हुआ माना जाता है। ''विकास का संबंध मानव की केवल भौतिक आवश्यकताओं से ही नहीं अपितु उसके जीवन की सामाजिक दशाओं की समुन्नति से भी है। विकास का अर्थ केवल वृद्धि नहीं है, बल्कि उसमें

सामाजिक सांस्कृतिक, संस्थागत तथा आर्थिक परिवर्तन भी सम्मिलित हैं।''अतः यह स्पष्ट है कि विकास के लिए सांस्कृतिक सामाजिक नीति का निर्माण आवश्यक है जो दुर्बल वर्गों की सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखे तथा उसे आर्थिक नीति के साथ संयोजित करे। जब तक आर्थिक नीति सुविचारित सामाजिक लक्ष्यों से नहीं जुड़ेगी तब तक इसके परिणामों के हानिकारण होने की संभावना बनी रहेगी।[4]

सामाजिक विकास न केवल सामाजिक चिन्ताओं को लेकर चलता है बल्कि आर्थिक विकास भी सामाजिक विकास के फलक के नीचे ही आता है। वे सामाजिक विकास में मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि और जीवन की गुणवत्ता के प्रश्नों को महत्वपूर्ण माना गया है। जीवन की गुणवत्ता एक बहुआयामी अवधारणा है। इसके अन्तर्गत आर्थिक अवसर ही नहीं आते, बल्कि इनका फायदा उठाने में मानव कितना सक्षम है या समर्थ, यह भी इसमें सम्मिलित किया जाता है। इसके अलावा जीवन दशाओं का अस्तित्व भी इसमें शामिल है। लोगों को इससे स्वस्थ एवं उत्पादक जीवन मिलता है। जीवन की गुणवत्ता को सुधारने के लिए निर्धनता का उन्मूलन और प्राथमिक न्यूनतम सेवाओं का प्रावधन किसी भी कार्यनीति के अभिन्न अंग हैं। कोई भी विकासात्मक प्रक्रिया तब तक निरंतर चलने योग्य नहीं बन सकती जब तक इससे इन क्षेत्रों में स्पष्ट और व्यापक सुधार नहीं होता। इसी प्रकार ''शिक्षा, स्वास्थ्य व्यवस्था, सामाजिक सुरक्षा आदि का प्रसाद प्रत्यक्षतः मानव जीवन के स्तर और गुणवत्ता को सुधारता है।''

विश्व के समस्त देशों में आर्थिक वृद्धि हुई है परन्तु उनकी वृद्धि दरें एक दूसरे से भिन्न रहती हैं। वृद्धि दरों में असमानताएं उनकी विभिन्न आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक ऐतिहासिक, तकनीकी एवं अन्य स्थितियों के कारण पाई जाती है। यहीं स्थितियां आर्थिक वृद्धि के कारक हैं। परन्तु इन कारकों का निश्चित रूप से उल्लेख करना भी एक समस्या है क्योंकि विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने अपने अपने ढंग से इनको बताया है। **किंडलबर्जर और हैरिक** ने भूमि और प्राकृतिक साधन, भौतिक पूंजी, श्रम और मानव पूंजी, संगठन प्रौद्योगिकी पैमाने की बचतें और मण्डी का विस्तार, तथा संरचनात्मक परिवर्तन को आर्थिक वृद्धि के कारक माने हैं। **रिचर्ड गिल** ने जनसंख्या वृद्धि, प्राकृतिक साधन, पूंजी संचय, उत्पादन के पैमाने में वृद्धि एवं विशिष्टीकरण और तकनीकी प्रगति को आर्थिक वृद्धि के आधारभूत कारक बतलाए हैं। साथ ही **लुइस** ने आर्थिक वृद्धि के केवल तीन कारक ही महत्वपूर्ण कहे हैं, ये हैं : बचत करने का प्रयत्न, ज्ञान की वृद्धि या उसका उत्पादन में प्रयोग और प्रति व्यक्ति पूंजी अथवा अन्य साधनों की मात्रा में वृद्धि करना। परन्तु नर्क्से इन कारकों को अर्थिक वृद्धि के लिए पर्याप्त नहीं समझता। उसके अनुसार, ''आर्थिक वृद्धि बहुत हद तक मानवीय गुणों, सामाजिक प्रवृत्तियों, राजनैतिक परिस्थितियों और ऐतिहासिक संयोगों से संबंध रखती है। वृद्धि के लिए पूंजी अनावश्यक तो है परन्तु उसके लिए केवल पूंजी का होना ही पर्याप्त नहीं है।'' अतरू राजनैतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक आवश्यकताएं आर्थिक वृद्धि के लिए उतनी ही महत्वपूर्ण हैं जितनी कि आर्थिक आवश्यकताएं।भारत गांवों का देश है, भारत की आत्मा गांवों में बसती है। ''भारत की 75 प्रतिशत जनसंख्या दूर दराज के गांवों में निवास करती है। यही वह क्षेत्र है जिसमें देश के अधिकांश निर्धन, बेरोजगार और इससे अधिक अनुपात में अशिक्षित, कुपोषित व पिछड़े लोग निवास करते हैं।गांधीजी का यह कथन ग्रामीण विकास के उद्देश्य एवं महत्व पर बल देता है कि ग्रामीण अंचलों का विकास किए बिना भारत विश्व के आर्थिक विकास की दौड़ में अग्रणी नहीं हो सकता। अतः ''ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन एवं असहाय लोगों को आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक स्तर से ऊपर उठाकर तथा उनमें व्याप्त रूढ़िवादिता, पक्षपात और संकीर्ण विचारधारा को समाप्त करके उन्हे स्वावलम्बी बनाया जा सकता है।उगांवों और ग्रामवासियों की सभ्यता और संस्कृति को सुरक्षित रखते हुए उन्हें आधुनिक समाज की मुख्य धारा में लाना तथा गरिमापूर्ण जीवन स्तर प्रदान करना ग्रामीण विकास का मुख्य लक्ष्य रहता है, जिससे जनता का शारीरिक और मानसिक विकास हो सके।''स्वतंत्रता

प्राप्ति से पूर्व सम्पूर्ण देश के समक्ष जन समुदाय की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रश्न ब्रिटिश शासन की चिन्ता का विषय थी। योजनाएं बनतीं भी थीं, उनका प्रभाव कुछ क्षेत्रों और कुछ लोगों तक ही होता था, समग्र विकास नाम की किसी चिड़िया को जाना नहीं जाता था। वर्ष 1947 तक देश के कर्णधारों और आम जनता की मुख्य चिंता देश को आजाद कराने की थी, इस कारण समग्र विकास उपेक्षित ही रहा। स्वतंत्रता के बाद ही समग्र विकास की दिशा में ठोस कदम उठाए गए।

2.शोध प्रश्न

- क्या मानव पूँजी के विकास के साथ–साथ आर्थिक विकास को तीव्र गति प्राप्त होती है तथा सामाजिक परिवेश में नए बदलाव आते है?
- मानवीय पूँजी की कार्यकुशलता की वृद्धि का आर्थिक विकास के साथ क्या संबंध है?

3.शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन की प्रकृति विश्लेषणात्मक है, जिसमें वर्णनात्मक शोध प्ररचना का प्रयोग किया गया है। वर्णनात्मक शोध एक ऐसा शोध है जिसका उद्देश्य विषय या समस्या के संबंध में यथार्थतः वास्तविक तथ्यों को एकत्रित कर उनके आधार पर एक विवरण प्रस्तुत करना है। वर्णनात्मक शोध में विषय या समस्या के विभिन्न पक्षों पर सविस्तार प्रकाश डाला जाता है। यहॉ मुख्य जोर इस बात पर दिया जाता है कि विषय से सम्बंधित एकत्रित किये गये तथ्य वास्तविक एवं विश्वसनीय हो।

4.ऑकड़ों का संकलन

प्रस्तुत शोध अध्ययन में अधिकतर द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है, जिनके लिए विभिन्न पत्रिकाओं, जर्नलस, केंद्र तथा राज्य सरकार द्वारा प्रकाशित समंक विशेषकर मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रकाशित रिर्पोटों का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

विकास के प्रयास–

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश के समस्त नागरिकों के समग्र विकास हेतु पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से विभिन्न कार्यक्रम संचालित किये गए। विकास की दृष्टि से इनका महत्वपूर्ण स्थान है। एक तरह से इन्हें भारत के विकास की बुनियाद कहा जा सकता है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951 – 56) पर कुल 30.40 करोड़ रुपया व्यय किया गया। जिसमें 09.05 करोड़ रूपया सिर्फ अनुसूचित जनजातियों के विकास कार्यों में लगाया गया, जिसमें स्वास्थ, संचार और आवास संबंधी कार्य प्रमुख थे। **द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956 – 61)**की कुल व्यय राषि 74.41 करोड़ रूपया थी। जिसमें से 42.92 करोड़ रूपया जनजातियों के कल्याण कार्यक्रमों पर व्यय हुआ।

इस अवधि में भी स्वास्थ, संचार, कृषि और शिक्षा संबंधी कार्य प्रमुख थे। इस योजना में आर्थिक विकास हेतु कृषि, कुटीर उद्योग, वन, सहकारी समितियों व विशेष ''बहुउद्देशीय जनजातीय विकास खंड'' की स्थापना पर बल दिया गया। इन खंडों को बनाने का मुख्य उद्देष्य जनजातियों के लिए विशेष योजना बनाना था।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961 – 66) में संपूर्ण पिछड़े वर्गों पर व्यय होने वाली राषि 100.40 करोड़ रूपया थी जिसमें से 51. 05 करोड़ रूपया जनजातियों पर व्यय किया गया। इस समय भी कृषि, स्वास्थ, संचार इत्यादि कार्यक्रम प्रमुख थे। साथ ही ग्रामीण विकास के लिये जो कार्यक्रम संचालित थे, वे सभी जनजातीय विकास के लिए भी लागू किये गये।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969 – 75) की कुल व्यय राषि 172.10 करोड़ रूपया थी जिसमें से 166.34 करोड़ रूपया जनजातीय कल्याण कार्यक्रमों पर व्यय हुआ।
पांचवीं पंचवर्षीय योजना(1974–79) – इस योजना का जनजातियों के विकास में महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें कृषि और जंगल जैसे विषयों को अधिक प्राथमिकता दी गई। साथ ही स्थानांतरित कृषि को छोड़कर स्थायी खेती को अपनाये तथा कृषि से संबंधित औजार, ऋण व मृदा संरक्षण के लिये अनुदान, सिंचाई के लिए सुविधायें जनजातियों तक पहुंचाना तय किया गया।

जनजातियों की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए पशुपालन के अंतर्गत सुअर पालन, मुर्गी पालन और भेड़ पालन को शामिल किया गया। समाजिक रूप से जनजातियों को जागरूक बनाने, मनोरंजन के कार्यक्रमों द्वारा स्त्रियों, पुरूषों को शिक्षा, स्वास्थ और सफाई हेतु प्रेरित किये जाने के कार्यक्रमों पर बल दिया गया।जनसंख्या आर्थिक विकास में सहायक है इस विचार को मानने वालों में प्रो. हैन्सन, आर्थर लुईस, कोलिन क्लार्क, रेबुशकीन, अल्फ्रेड बोन तथा ई.एफ. पेनरोज का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्रो. हेन्सन के अनुसार जनसंख्या वृद्वि आर्थिक विकास की एक पूर्ण शर्त है। प्रो. हर्षमैन का कहना है कि जनसंख्या दबाव आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करता है।

विकास के अवरोधक तत्व –

- निर्धनता
- अंधविश्वास और छुआछूत
- दुर्गम निवास स्थान
- षिक्षा संबंधी समस्याएं
- स्वास्थ संबंधी समस्याएँ

बैतूल जिले पर प्रभाव–
सहकारी संस्थाएँ– समुदायिक विकास कार्यक्रम के अतंर्गत सहकारी संस्थाओं ने ग्रामीण जनता के आर्थिक विकास की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। सामान्य सहकारी साख संस्थाओं के अतिरिक्त पुराने कुटीर उद्योगों का सहकारी आधार पर संगठन किया गया, जिससे उनका उद्धार हो। इसलिए द्वितीय पंचवर्षीय अवधि के दौरान विभिन्न खंडों मे सभी प्रकार की 233 सहकारी संस्थाए आरम्भ की गईं। **जिले** के दौरान भीमपुर में एक विषेष बहुउद्देश्यीय खंड खोला गया तथा उस क्षेत्र में आदिम जातियों के संर्वागणीय कल्याण के लिए गतिविधियां संकेन्द्रित कर दी गईं। अनुसूचित भैसदेंही तहसील के क्षेत्र में वर्ष 1957–59 के दौरान बड़े आकार की पांच सहकारी साख संस्थाएं गठित की गई थी। इन साख संस्थाओं को 4,15,000 रू. की हिस्सा पूंजी ऋण दिया गया था। इसके अतिरिक्त भैसदेंही की विपणन संस्था को जो पहले कृषि संस्था थी, उसे बदल कर अब विपणन संस्था बना दिया गया और 20,000 रूपये का हिस्सा पूंजी ऋण तथा गोदाम ऋण तथा अर्थ सहायता के रूप में 20,000 रूपये की रकम दी गई थी। आठनेर स्थित बहुउद्देष्यीय सहकारी संस्था को 1959 में 25,000 रूपये का सहायता के अनुदान दिया गया बाद में तैतीस ग्राम सेवा संस्थाएं (संगठन द्वारा 4 तथा 29 पुनः प्रवर्तन द्वारा) स्थापित की गई प्रत्येक सेवा संस्था को उनके पंजीयन की तारिख सें पांच वर्षों की अवधि के लिए 180 रूपयें की प्रबंधकीय अर्धसहायता स्वीकृत की गई।

तृतीय पंचवर्षीय योजना के प्रथम दो वर्षों में अर्थात 1961–62 तथा 1962–63 में पहले ही प्रारंभ की गई अन्य दो संस्थाओं के अतिरिक्त तीन बहुउद्देश्यीय सहकारी संस्था गठित की गई। इनकें अलावा दो वन श्रमिक सहकारी संस्थाएं भी गठित की गई थी। इस आयोजनावधि के दौरान जिले के सभी विकास खंडों में कुल मिलाकर 371 सहकारी संस्थाए कार्य कर रही थीं। वर्ष

1967–68 के आंतरिक जिले में 30 बहुउद्देश्यीय सहकारी संस्थाएं थी। जिनकी सदस्य संख्या 2,901 थी और केवल अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के लिए थी।आदिवासियों को भूमि की हानि से संरक्षण प्रदान किए जाने और साहूकारों तथा चलते फिरते विक्रेताओं द्वारा उधार पर वस्तुएं देकर किये जाने वाले शोषण से उन्हें बचाने के अतिरिक्त उनकी प्रमुख आर्थिक अवस्था यह थी कि वैकल्पिक रूप से उनके लिए ब्याज की दर पर ऋण प्राप्त करने की सुविधा की व्यवस्था की जाये। ऐसी सहकारी संस्थाओं की संख्या जिनके केवल आदिवासी ही सदस्य थे, क्रमशः बैतूल तहसील में 53 और भैंसदेही तहसील में 4 थी। इनमें सदस्यों की संख्या क्रमशः 563 तथा 26 थी। इन संस्थाओं में से बैतूल की 5 सहकारी संस्थायें जिनमें 147 आदिवासी सदस्य थे। उल्लेखनीय है कि जिले की अंशतः शामिल न की गई भैंसदेही तहसील में तो आदिवासी सदस्यों वाली सरकारी संस्था का अस्तित्व ही नहीं था। इस प्रकार स्थिति उत्साहजनक नहीं थी।

ऋण निवारण न्यायालयों की स्थापना– जिले की आदिम जनजातियां आर्थिक दृष्टि से कृषि पर निर्भर रही हैं। आदिवासियों ने 42 वर्षों (1897–99 से 1939–40 तक) की अल्पावधि के दौरान अपनी भूमि का 14.4 प्रतिशत भाग खो दिया था। इसके कारण आदिवासी जाति, जांच अधिकारी को कहना पड़ा कि कुछ ऐसे काम जिनमें आदिवासी काश्तकारों को बैतूल जिले की अपेक्षा संरक्षण प्रदान करना अधिक आवश्यक है। आदिवासियों की स्थिति सुरक्षित नहीं थी। वे लोग धीरे धीरे बाहर से आए व्यापारियों तथा किसानों द्वारा विस्थापित किए जा रहे थे। स्वामित्व व अधिकार में धारित कृषि भूमि के अंतरण पर प्रतिबन्ध लगाने और सीधे–सादे तथा दरिद्र आदिवासियों से उसके अन्यक्रामण पर रोक लगाने की दृष्टि से मध्यप्रान्त तथा बरार शासन ने प्रान्त के कुछ भागों मे कतिपय आदिवासी वर्गों पर भूमि अन्यक्रामण अधिनियम 1916 लागू किया। यह अधिनियम बैतूल जिले में सन् 1917 में लागू किया गया।

समाजिक सुधार– ब्रिटिश कंपनी ने भारत के सामाजिक जीवन में हस्तक्षेप करते हुए सन् 1826 में लॉर्ड विलियम बेटिंक द्वारा सती प्रथा को समाप्त कर दिया गया। सन् 1832 तथा 1850 में कानून बनाकर धर्म परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाली अयोग्यताओं को समाप्त कर ईसाई धर्म अपनाने वालों को विरासत का अधिकार दिया गया। सन् 1856 में विधवा विवाह की आज्ञा दी गई। किन्तु बाद में उन्होंने भारतीयों के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में हस्तक्षेप न करने की नीति अपनाई। साथ ही वे धीरे धीरे समाज के रूढ़ीवादी तथा पुरातनपंथी तत्वों का पक्ष लेने लगे। देश में राष्ट्रवाद की बढ़ती हुई चुनौतियों का सामना करने के लिए अंग्रेजों ने फूट डालो और शासन करो की नीति को अपनाया। उन्होंने जोर शोर से सांप्रदायिकता तथा जातिवाद को बढ़ावा दिया, जिससे समाज में प्रतिक्रियावादी ताकतों को बल मिला। दूसरी ओर भारतीय समाज में सदियों से व्याप्त अंधविश्वास, शिक्षा की प्रगति के साथ साथ शिथिल होते गया।शिक्षा के विकास के साथ ही इन वर्गों में राजनैतिक तथा सामाजिक जागृति देखी गई और जाति प्रतिबंधों के संबंध शिक्षित पीढ़ी के विचारों में भी परिवर्तन देखा गया। समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं के प्रसार के साथ नए उदार तथा प्रजातांत्रिक विचारों का तेजी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रसार होने लगा। इस शताब्दी के तृतीय तथा चतुर्थ दषक की राजनैतिक गतिविधियों ने इन वर्गों के व्यक्तियों में उनके नागरिक अधिकारों के प्रति चेतना जगाई तथा अस्पृष्यता की बुराई के विरुद्ध सामाजिक और राजनैतिक प्रचार ने सामान्य जनता के विचारों में परिवर्तन लाने में अत्याधिक सहायता दी। सन् 1935 अखिल भारतीय हरिजन सेवा संघ की एक शाखा इस जिले में स्थापित की गई। इस स्वंय सेवी संगठन ने जहाँ एक ओर हरिजनों के सर्वागीण कल्याण के लिए उन्हें प्रोत्साहित किया वहीं दूसरी ओर अपने प्रचार द्वारा उसनें अस्पृष्यता के निवारण के पक्ष में लोक मत जागृत किया।

शिक्षा– वर्तमान समय लोग षिक्षा का महत्व समझने लगे हैं, क्योंकि शिक्षा उनके लिए सरकारी नौकरी प्राप्त करने का माध्यम है। परंतु यह औपचारिक षिक्षा प्रणाली उनके लिए सफल नहीं हो पा रही है। गरीबी के कारण भी ये लोग लगातार शिक्षा

प्राप्त नहीं कर पाते। अभी तक जनजातीय समुदाय के सभी सदस्य किसी न किसी रूप में आर्थिक कार्यों में संलग्न रहते थे परंतु स्कूल जाने पर उनका यह कार्य रूक जाता है। शिक्षा प्राप्त करने के बाद ऐसे व्यक्ति अपने समूह के अन्य लोगों से एक दूरी का अनुभव करते हैं। अनेक व्यक्ति तो अपनी संस्कृति को हेय दृष्टि से भी देखने लगते हैं।

परिवहन के साधन– प्राचीन काल में जिले में जहाँ अच्छी सड़कें नहीं थीं वहां माल दुर्गम रास्तों से सिर पर ढोकर या बैलों पर या घोड़ों पर लाद कर ले जाया जाता था। जिले के शेष भाग में परिवहन प्रयोजनों के लिए गाड़ियों का उपयोग किया जाता था। इन क्षेत्रों में सड़क बन जाने के बाद इन गाड़ियों के स्थान पर कारें, बसें और ट्रक चलने लगे। जिले के भीतरी क्षेत्रों में, जहाँ अभी भी सड़कों से नहीं पहुंचा जा सकता है। परिवहन के पुराने साधन आज भी प्रचलित हैं।वर्ष 1868 में जिले के आर–पार जाने वाली पांच मुख्य सड़कें थीं–

(1) बदनूर (बैतूल) से नागपुर की ओर जाने वाली सड़क, जिस पर कहीं–कहीं पुल भी है।
(2) बदनूर (बैतूल) से होशंगाबाद की ओर जाने वाली सड़क जिस पर सभी स्थानों पर पुल है, होशंगाबाद में शाहपुर से सोहागपुर तक एक शाखा।
(3) बदनूर (बैतूल) से मह्रू, हरदा होकर।
(4) बदनूर (बैतूल) से एलिचपुर तथा बड़नौरा।
(5) बदनूर (बैतूल) से छिंदवाड़ा।

31 मार्च 1969 को जिलें में इस श्रेणी में आने वाली सड़कों की कुल लंबाई 431.15 कि.मी. थी। उनका अनुरक्षण राज्य के लोक निर्माण विभाग द्वारा किया जाता है। इस श्रेणी में निम्नलिखित सड़कें आती हैं–

1. बैतूल–अचलपुर सड़क झल्लार और गुड़गांव होकर
2. बैतूल–हरदा सड़क
3. बैतूल–आठनेर सड़क .
4. मुलताई–आठनेर चिल्कापुर सड़क

रेल्वे– 1913 तक बैतूल जिले से होकर कोई रेल्वे लाइन नहीं गुजरती थी। किंतु 1906 में शासन द्वारा जिलें में रेल्वे लाइन बिछाने की योजना अनुमोदित की गई थी।

स्वास्थ्य सुधार – चिकित्सालय तथा औषधालय –

वर्ष 1915 तक जिले में बैतूल में केवल एक चिकित्सालय तथा मुलताई और भैंसदेही तहसील मुख्यालयों में एक–एक औषधालय था। इसकी तुलना में 1947 में, बैतूल तहसील में एक चिकित्सालय तथा दो औषधालय, मुलताई तहसील में एक औषधालय तथा भैंसदेही तहसील में दो औषधालय थे। जिले में औषधालयों की संख्या में मुतलाई तहसील में दो और भैंसदेही तहसील में भी एक औषधालय की वृद्धि की गई। 1951 में, बैतूल तहसील में तीन और अधिक औषधालय खोले गये तथा मुलताई और भैंसदेही तहसीलों के विद्यमान औषधालयों में से एक–एक औषधालय को चिकित्सालयों में उन्नत कर दिया गया। 1954 में बैतूल तहसील में औषधालयों की संख्या उतनी ही बनी रही।

डाक तार तथा टेलीफोन–

जब डाक विभाग प्रारंभ किया गया था तब सामान्यतः पत्र तथा पार्सलें डाक हरकारों द्वारा ले जाई जाती थी। ये हरकारें सहज ही हर खतरें के षिकार होते थे और कभी–कभी उन पर डाकुओं द्वारा हमला कर दिया जाता था तथा वे लूट लियें जातें थे। समय–समय पर इस प्रकार के अनेक मामलें शासन की जानकारी में श्राय. डाक विभाग के कर्मचारियों को प्रायः पेंषन दी जाती थी कलांतर में डाक हर कारों के स्थान पर घोड़ा द्वारा खींची जाने वाली डाक–गाड़ियां चलाई जाने लगी, यह परिवर्तन पहली बार 1949 में किया गया और क्रमषः सभी भागों में अपना लिया गया। डाक एक स्थान को ठेकेदारों द्वारा ले जाती थी जो डाक घरों से किन्हीं दो स्थानों के बीच नियत राषि पर नियत गति और समय में डाक तथा पारसल ले जाने का करार करते थे, डाक बांटने वाले चपरासियों तथा डाकियों को पांच रूपये मासिक वेतन दिया जाता था जो उन दिनों अच्छा वेतन माना जाता था।

5.निष्कर्ष

इस प्रकार सदियों से उपेक्षित जनजातियों के एकांकी जीवन चक्रं में अपेक्षित प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता है। यद्यपि शिक्षा और स्वास्थ्य की दिशा में किये गये प्रयासों का सकारात्मक प्रभाव दिखाई पड़ता है, स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्यां में वृद्धि हुई, छात्राओं की संख्यां कम ही थी किन्तु शिक्षा के प्रति उनका रुझान बढ़ने लगा था। यह जनजातियों में शिक्षा के प्रति बढ़ते महत्व का संकेत था। किन्तु तमाम प्रावधानों के बाद भी उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय बनी रही, वे अपनी भूमि से बेदखल होते रहे, साहूकारों के चुगंल में फसते रहे और भरण पोषण के लिए भटकने पर विवश होते रहे। सांस्कृतिक दृष्टि से सभ्य समाज का प्रभाव उन पर पड़ने लगा था, किन्तु इसके बावजूद वे अपनी पुरातन संस्कृति से पूर्व की भांति जुड़े रहे। स्वास्थ्य सुविधाएं एवं सेवाओं के अन्तर्गत प्रयत्नों को सम्मिलित किया जाता है जिससे लोगों की औसत जीवन प्रत्याशा शारीरिक शक्ति एवं योग्यता काम करने की इच्छा और प्रेरणा आदि में वृद्धि होती है। मानवीय साधनों की कार्य क्षमता कार्य कुशलता शारीरिक योग्यता पर निर्भर करती है मानवीय पूँजी में अधिक से अधिक विनियोग किया जाना चाहिए ताकि आर्थिक विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक मानवीय साधन का पूर्ण रूपेण विकास हो सके। चूंकि आर्थिक विकास मानवीय साधनों पर निर्भर करता है इसलिए मानवीय साधनो का विकास आर्थिक विकास की एक पूर्व आवश्यकता है।